IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 8, May 2026
Impact Factor: 8.2

मौर्य कालीन शासन व्यवस्था : एक अध्ययन

डॉ. प्रदीप सिंह
असिस्टेंट प्रोफेसर
प्राचीन इतिहास, पुरातत्त्व एवं संस्कृति विभाग
टी. डी. पी. जी. कालेज, जौनपुर (उ0प्र0)

मौर्य प्रशासन के अन्तर्गत भारत में प्रथम बार राजनीतिक एकता देखने को मिलती है। मौर्य काल में गणराज्यों का अवनति होने लगा एवं शासन सत्ता अत्यधिक केंद्रित हो गयी। मौर्य काल में सम्राट की शक्ति में वृद्धि हुई। कौटिल्य ने मौर्य कालीन शासन व्यवस्था को धर्म, व्यवहार एवं लोकाचार के ऊपर बताया है। सम्राट ही राज्य की नीति निर्धारण करता था। और अपने प्रशासनिक अधिकारियों को ही समय–समय पर निर्देश दिया करता था। सम्राट अशोक के शिलालेखों से पता चलता है कि प्रजा के नाम उसकी राजा की आज्ञाएं जारी होती थी। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में बताया गया है कि किसी बात सुलझाने में नीतिशास्त्र और शासक के कानून में मतभेद होता था तो राजा का कानून ही मान्य होता था।[1] मौर्य कालीन शासन व्यवस्था एक केन्द्रीयकृत प्रशासनिक थी जिसमें राजतन्त्र गणतन्त्र से कही अधिक प्रभावशाली था मौर्य युग में राजा के अधिकार व्यापक होते थे। उसमें सैनिक, न्यायिक, वैधानिक एवं कार्यकारी सभी शक्तियाँ शामिल होती थी। इन शक्तियाँ के अन्तर्गत शासक ही व्यवस्थापिका, कार्यपालिका एवं न्यायपालिका का प्रमुख होता था। राजा का अधिकार बहुत व्यापक था उसे नियम बनाने, शासन करने, संधि करने आदि के विषय में पूर्ण स्वतन्त्रता थी। राजा ही, शासन के पदाधिकारियों को नियुक्ति करता था। राजा प्रजा के कल्याण के लिए अपने कर्तव्यों व्यवस्था का पालन करता था।

मंत्रिपरिषद– कौटिल्य के अर्थशास्त्र, अशोक के अभिलेख एवं मौर्योत्तर स्रोतों में मंत्रिपरिषद के बारें में पता चलता है। वेदों एवं महाकाव्यों में प्रारम्भिक परिषद का स्वरूप जनजातीय सैनिक सभा का था। तथापि बाद में विकसित मंत्रिपरिषद ढाँचे और कार्य की दृष्टि से पहले से अलग थीं। उत्तर वैदिक काल के अंत में वर्णों और राज्य की शक्ति के विकास के कारण परिषद अंशतः विद्वत मण्डली और राजसभा जैसी बन गयी और उसमें अध्यापकों एवं परामर्शदाताओं के रूप में पुरोहितों का प्रभाव बढ़ता गया। चन्द्रगुप्त मौर्य के शासन काल में पुरोहित ही प्रधानमंत्री होता था लेकिन सम्राट अशोक ने पुरोहित के पद को समाप्त कर दिया एवं उसके स्थान पर परिषद (मंत्रिपरिषद) शब्द का प्रयोग किया।[2] कौटिल्य के अर्थशास्त्र में मंत्रिपरिषद को परिषद कहा गया है एवं जातकों में परिषद। वृहदारण्यक उपनिषद में पहले ही समिति को परिषद कहा गया है। इस प्रकार मंत्रिपरिषद समिति परिषद का ही परिवर्तित रुप रहा है।[3] मंत्रिपरिषद राजतन्त्र का एक महत्वपूर्ण अंग था। कौटिल्य ने मंत्रिपरिषद का महत्व बतलाते हुए कहा है कि केवल दो आँखे रहते हुए भी इन्द्र को सहस्राक्ष इसलिए कहा गया है कि उसकी मंत्रिपरिषद में एक हजार बुद्धिमान सदस्य थे जो उसके नेत्र थे। राजा कितना भी दक्ष क्यों न हो उसे अकेले शासन करना चाहिए[4], राज्य का संचालन अकेले शासक नहीं कर सकता था, इसलिए कौटिल्य ने राजा को राज्य के कार्य में सहयोग एवं सहायता के लिए मंत्री नियुक्ति करने का निर्देश दिया है।[5] मनु ने कहा है कि– साधारण से साधारण कार्य भी कोई व्यक्ति अकेला नहीं कर सकता तो राज्य के कार्य जैसा महान कार्य जैसा महान कार्य राजा मंत्री की सहायता के बिना कैसे कर सकता है।[6] कामन्दक ने मंत्री के महत्व को बताते

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 8, May 2026 Impact Factor: 8.2

हुए कहा है कि अमात्य और युवराज राजा के भुजाओं के समान है। मंत्री राजा के नेत्र होते है। अतः मंत्री के बिना राजा शासन का कार्य सही ढंग से नहीं कर पाते हैं।[7] कौटिल्य के अर्थशास्त्र से पता चलता है कि मंत्रिपरिषद राजा को परामर्श देने वाली समिति या सभा थी। मंत्रिपरिषद का कार्य राज–कर्मचारियों के कार्यों का नियमन करना तथा प्रशासकों से सम्राट के शासन आज्ञाओं का अनुपालन कराना भी था।[8] गृह्यसूत्रों में परिषद का बहुलता से उल्लेख मिलता है। ये परिषद मंत्रिपरिषद के यथा रूप कार्य करती थी।[9] पाणिनी ने कहा है कि राज्य से सम्बन्धित परिषद मंत्रिपरिषद थी। राजा मंत्रिपरिषद के साथ विचार–विमर्श कर राजकार्यों का संचालन करता था। इस तरह के राजा को 'परिषद्बलों राजा' कहा गया है। परिषद में लिए गये निर्णयों को 'परिषतीर्ण' कहते थे। राजकीय मंत्रिपरिषद के अतिरिक्त धर्म से सम्बंधित परिषदे भी होती थी।[10] मनु का कथन है कि अर्थविहीन राजा अपने मंत्रिपरिषद की मंत्रणा को गुप्त रखकर सम्पूर्ण पृथ्वी का स्वामी हो सकता है।[11]

मंत्रियों के अधिकार एवं कर्तव्य– मंत्रियों के अधिकार एवं कर्तव्य के सम्बंध में अर्थशास्त्र में निम्नलिखित कर्तव्य बताये गये हैं[12]–

1. राष्ट्र के कार्यों के सम्बंध में मंत्रणा करना।
2. मंत्रणा के फल की प्राप्ति।
3. कार्यों का अनुष्ठान।
4. आय–व्यय सम्बन्धी कार्य का लेखा–जोखा करना।
5. सैनिकों की नियुक्ति करना।
6. सेना का संचालन करना या संधि–विग्रह करना।
7. शत्रुओं और जंगली जातियों से राज्य की रक्षा करना।
8. राज्य की आन्तरिक व्यवस्था करना।
9. राजकुमारों की शिक्षा–दीक्षा उनकी रक्षा एवं पदों पर उनकी नियुक्ति तथा समय आने पर राज्याभिषेक करना।

उपरोक्त सभी कार्य मंत्रियों द्वारा ही सम्पादित किये जाते थे। मंत्रियों का कर्तव्य राजा को मंत्रणा देना तो था, ही इसके अतिरिक्त उन्हें निम्नलिखित कार्य का भी सम्पादन करना था।

1. राज्य द्वारा निर्धारित कार्यों को प्रारम्भ करना।
2. कार्य को सम्पन्न करने के लिए आदमी और धन का निर्धारण करना।
3. विभिन्न कार्य के लिए उपर्युक्त स्थान एवं समय निर्धारित करना।
4. कार्यसिद्ध के साधनों पर विचार करना।
5. जिन कार्यों को प्रारम्भ में किया गया हो।

उसे प्रारम्भ करना, प्रारम्भ किये हुए कार्य को पूरा करना तथा पूरा किये हुए कार्य में कुछ विशेषता लाना आदि कार्य मंत्रियों द्वारा ही किये जाते थे।[13] कौटिल्य का कहना है कि राजा को सामान्यतः तीन या चार मंत्रियों से मंत्रणा करनी चाहिए।[14] ये तीन या चार मंत्री सम्भवतः परामर्श देने वाली अंतरंग समिति या परिषद के सदस्य होते थे।[15]

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 8, May 2026 Impact Factor: 8.2

अधिकारी वर्ग– कौटिल्य के अर्थशास्त्र तथा समकालीन स्रोतों के आधार पर यह अनुमान लगाया जा सकता है कि एक विशाल और जटिल अधिकारी–तंत्र की स्थापना सबसे पहले मौर्य काल में ही दिखायी देती है, जो इस काल में विशेषता है। कौटिल्य ने राज्य के प्रमुख केन्द्रीय अधिकारियों को तीर्थ कहा है, जिसकी संख्या अठारह थी।[16] शायद अठारह तीर्थ ही महामात्र या उच्च अधिकारी कहे गये हैं, जो सम्भवतः विभागों के अध्यक्ष थे तथा राज्य शासन–व्यवस्था के संचालन में राजा को सहयोग प्रदान करते थे।[17] उन प्रमुख अधिकारियों का विवरण निम्नलिखित है–

पुरोहित– प्राचीन काल से ही पुरोहित का पद प्रचलित था। इनका पद वंशानुगत होता था। पुरोहित, पुरोहित राजा के अर्थ एवं धर्म के अनुशासक होते थे। अधिकार पुरोहित को यह था कि सही सलाह दे। पुरोहितों के प्रति राजा को उसी प्रकार अनुकरण करना चाहिए जैसे पुत्र–पिता का, शिष्य–आचार्य का और भृत्य अपने स्वामी के आदेशों का अनुकरण करता है।[18] धर्मशास्त्रों से ज्ञात होता है कि पुरोहित प्रशासन में मार्गदर्शक का कार्य करता था। प्राचीन काल में ऐसा विश्वास था कि युध्द के समय पुरोहित सेना का नेतृत्व करता था तो राजा विजयी हो जाता था। बिना पुरोहित के राजा वैसा ही समझा जाता था जैसे बिना महावत के हाथी।[19]

मंत्री– मंत्रियों के परामर्श से ही शासक विभिन्न विभागों से अमात्यों की नियुक्ति करता था।[20] विदेशों में दूतों की नियुक्ति मंत्री के परामर्श से राजा द्वारा ही की जाती थी। राज्य के सभी अधिकारियों पर नियंत्रण मंत्री और पुरोहित का ही रहता था। राजा मंत्री के परामर्श से राज्य के कार्यो का संचालन करता था।[21] राजा के बाद सबसे महत्वपूर्ण अधिकारी मंत्री ही था।

युवराज– युवराज अग्रमहिषि से उत्पन्न ज्येष्ठ पुत्र होता था। राजपुत्रों को कुमार एवं ज्येष्ठ पुत्र को आर्य कहा जाता था जैसा कि अशोक के अभिलेखों से प्रकट है।[22] युवराज को प्रशासन से सम्बद्ध रखा जाता था ताकि उसे राज्य के प्रशासन का ज्ञान हो सके। युवराज राजा का सहायक भी होता था। अशोक के काल में उसका पुत्र सम्प्रति युवराज था तथा कुणाल तक्षशिला का प्रान्तीय शासक था।[23]

सेनापति– राजा सेना का मुख्य सेनापति था लेकिन सैन्य व्यवस्था और संचालन की पूरी जिम्मेदारी सेनापति की थी।[24] सेनापति का पद बहुत महत्वपूर्ण होता था। सेनापति में सेना के सम्पूर्ण अंगों के संचालन की क्षमता होनी चाहिए और आवश्यकता के अनुसार सेना को आगे या पीछे हटाने की क्षमता प्राप्त होनी चाहिए। सेनापति को दुर्गो पर सफलतापूर्वक आक्रमण और दुर्ग को ध्वस्त करना तथा कब पूर्ण रूप से धावा बोल देना चाहिए आदि सभी बातों को समझना चाहिए। सेनापति अपने गुप्त संकेतो का प्रयोग करे जिसे शत्रु न समझ सके।[25]

दौवारिक– दौवारिक राज–प्रासाद का उच्च अधिकारी था। प्रातः काल राजा के शयन से उठने पर चतुर्थ कक्ष में मंत्रियों और राजा के सम्बंधियो के साथ दौवारिक भी राजा से भेंट करता था तथा राजा के कार्यों का सम्पादन करता था।[26]

अन्तरवंशिक– राज–प्रासाद के आन्तरिक विषयों का प्रधान अधिकारी अन्तरवंशिक होता था तथा अन्तः पुर की सुरक्षा–सेना का अधिकारी भी यही था।[27]

प्रशास्ता– यह कारागार का प्रधान अधिकारी होता था।[28] राजकीय आज्ञाओं पर ही शासन आधारित होता है। इन राजकीय आज्ञाओं को लिपिबद्ध करने के लिए एक पृथक अधिकरण था, जिसके प्रधान अधिकारी को प्रशास्ता कहते थे।[29]

समाहर्ता– समाहर्ता अथवा राजस्व मंत्री राजकीय करो को एकत्रित करता था। इसके अनेक अधिकारी होते थे, जो राजकीय करो को एकत्रित करते थे। कौटिल्य के अर्थशास्त्र से प्रतीत होता है कि यह चुंगी, राष्ट्र, सेतु, वन व्रज आदि पर कर वसूल करने वाला अधिकारी था। आय–व्यय में लाभ–हानि का लेखा–जोखा करने की जिम्मेदारी इसी की थी।[30]

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 8, May 2026 Impact Factor: 8.2

सन्निधाता– यह राजकोष का मंत्री था। इसके यहाँ नये और पुराने रत्न कच्चा माल, हिरण्य, आयुध आदि एकत्र होता था। इसके अतिरिक्त इसका कार्य कोषगृह, कोष्ठागार, अन्नागार, आयुधागार और कारागार का निर्माण करवाना भी था।[31]

प्रदेष्टा– यह एक कण्टक शोधन का अधिकारी था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र से पता चलता है कि यह न्याय और शासन सम्बन्धी कार्यों का अमात्य होता था तथा विभिन्न विभागों के अध्यक्षों और उनके कर्मचारियों के कार्यों का भी निरीक्षण व नियमन करता था।[32] अपराधों का पता लगाना भी इसी का काम था।

नायक– नायक का कार्य सैनिक छावनियाँ का निर्माण करवाना था। अर्थशास्त्र में दस सेनापति के प्रमुख को नायक माना गया है।[33]

पौरव्यावहारिक– सम्राट अशोक के अभिलेखों में नगर व्यवहारिक का वर्णन है।[34] यह अधिकारी उसी के समान है। इसका कार्य न्याय करना था।[35]

कर्मान्तिक– यह उद्योगशाला का अधिकारी था। मौर्यकाल में में राज्य की तरफ से अनेक उद्योगों का संचालन होता था। इसके लिए बहुत से कारखाने स्थापित किये गये थे।[36]

मंत्रिपरिषदाध्यक्ष– यह मंत्रिपरिषद का प्रधान एवं अध्यक्ष होता था।

दण्डपाल– यह पुलिस विभाग का सबसे बड़ा अधिकारी था।

दुर्गपाल– यह किले का अधिकारी होता था।

अन्तपाल– यह सीमान्त का सुरक्षा अधिकारी था। मौर्य काल में सीमान्त का बहुत अधिक महत्व था। सीमा की रक्षा के लिए बहुत से दुर्गो का निर्माण किया जाता था। सीमा प्रदेश के मार्गो पर स्थान–स्थान पर स्कन्धावार स्थापित किये कि जाते थे। इनकी व्यवस्था का जिम्मेदारी अन्तपाल का ही था।[37]

आटविक– यह वन्यप्रदेश का अधिकारी होता था। अशोक के अभिलेखों में कुछ अधिकारियों का उल्लेख मिलता है जिनकी नियुक्ति अशोक के द्वारा किया गया था जो निम्नलिखित है।

युक्त– यह जिले के राजस्व विभाग अधिकारी था। अशोक के तीसरे अभिलेख में युक्त का रज्जुक और प्रादेशिक के साथ नाम आया है। इस अभिलेख में युक्त (प्रादेशिक, रज्जुक) आदि को प्रशासनिक कार्यों के अलावा धर्म प्रचार के लिए प्रति पाँच वर्ष पर अपने प्रदेश का भ्रमण करना होता था।[38]

प्रादेशिक– कौटिल्य के अर्थशास्त्र में उल्लिखित प्रदेष्टा है। प्रदेश का शासक प्रादेशिक कहलाता था। वह आजकल के राज्यपाल के समकक्ष है।[39]

रज्जुक– अशोक के चौथे स्तम्भ लेख में रज्जुक का उत्तराधिकारी के रूप में उल्लेख आया है। रज्जुक न्याय एवं दण्ड देने के लिए उत्तरदायी थे।[40] सुशासन द्वारा जनता का जीवन सुखी बनाना एवं धर्म आचरण तथा धर्म उपदेश द्वारा जनता को पारलौकिक सुख प्राप्त करना उनके राजकीय कर्तव्य थे।[41] बुलेर भी रज्जुक का सम्बन्ध रज्जु (रस्सी) से मिलाकर उन्हें कर और पैमाइस का अधिकारी कहता है।[42] रज्जुक एक प्रमुख सरकारी अधिकारी था जिन्हें अपन क्षेत्र में सभी महत्वपूर्ण कार्य करना पड़ता था।

नगर व्यवहारिक– कलिंग पृथक शिलालेख में नगर व्यवहारिक के नाम का उल्लेख है। नगर व्यवहारिक कौटिल्य के अर्थशास्त्र में उल्लिखित पुर व्यवहारिक ही प्रतीत होता है।[43] जूनागढ़ अभिलेख से पता चलता है कि नगर व्यवहारिक नगर की बहुसंख्यक जनों का अधिकारी था। प्रजा के हित के लिए इन्हें सभी प्रकार से कार्य करने पड़ते थे।[44]

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 8, May 2026 Impact Factor: 8.2

धर्म महामात्र– अशोक ने बौद्ध धर्म के प्रचार–प्रसार एवं जनता के नैतिक एवं आत्मिक समृद्धि के लिए धर्म महामात्र नामक अधिकारी की नियुक्ति करते थे। पाँचवे अभिलेख अभिलेख में अशोक ने धर्म महामात्र के कार्यों का जो विवरण दिया है, वह इस प्रकार है– उनको ब्राह्मणों, आजीवक, निर्ग्रन्थ और गृहस्थों की देखभाल करनी होती थी।[45] सामाजिक हित के कार्यों का सम्पादन भी उन्हें ही करना पड़ता था, उन्हें सम्राट और राजकीय परिवार के द्वारा दान कर्म की भी व्यवस्था करनी पड़ती थी।[46] धर्ममात्रों को धार्मिक सम्प्रदायों से सम्बंधित कार्य, धर्म की वृद्धि, धार्मिक जनों के हित सुख की वृद्धि धार्मिक सहिष्णुता और समन्वय की वृद्धि और राजकीय संरक्षण का समुचित वितरण करना पड़ता था।[47]

स्त्रीध्यक्ष– धर्म का प्रचार–प्रसार करने के लिए जो अधिकारी नियुक्त किये जाते थे उसे स्त्रीध्यक्ष महामात्र कहा जाता था। 12वें शिलालेख में धर्म महामात्र के साथ स्त्रीध्यक्ष महामात्र एवं ब्रजभूमिक का उल्लेख है।[48] रोमिला थापर ने कहा है कि इनका कार्य वेश्याओं की देखभाल करना तथा स्त्री सम्बंधी दूसरा कार्य भी करना था। ये अधिकांश समय शाही जनानखाने में लगाते थे, तथा वहाँ के प्रशासनिक मामलों की देखभाल भी करते थे।[49]

ब्रजभूमिक– कौटिल्य के अर्थशास्त्र में गाय, भैंस, बकरी, भेड़, घोड़े आदि पशुओं के समूह को अथवा उनके रखे जाने के स्थान को ब्रज कहा गया है।[50] ब्रजभूमिक राजकीय चारागाह और पशुओं के अध्यक्ष थे। राजबलि पाण्डेय के ब्रज या 'ब्रज' को संस्कृत का ब्रज माना है, जिसका अर्थ है चारागाह। तथा भूमिक का अर्थ पद अथवा चारागाह का अधिकारी होता था।[51]

महामात्र– महामात्र राजा का प्रधान कर्मचारी होता था। इसका कार्य आय–व्यय तथा बचत धन के विषय में प्रजा को समझना तथा अवगत कराना था। अशोक के अभिलेखों में वर्णन, है कि महामात्र अनुसंयान पर निकलेंगे और अपने कर्तव्यों की अवहेलना न करते हुए मेरे आदेश का पालन करेंगें।[52] कौटिल्य ने इसके अतिरिक्त प्रशासन के भूमिगत विभागों–प्रान्तों, जिलों तथा अन्य क्षेत्रों के अधिकारियों तथा पूर्व वर्णित अठारह तीर्थों के अलावा अनेक अधीक्षको का भी वर्णन किया है जिसका वर्णन संक्षिप्त रूप में निम्नलिखित प्रकार है– अन्तपाल, सन्निधाता समाहर्ता, अक्षपटल, खदानों का अध्यक्ष, सुवर्णाध्यक्ष, कोष्ठागाराध्यक्ष, पण्याध्यक्ष, कुप्याध्यक्ष, शुल्काध्यक्ष, आयुधागाराध्य, सूत्राध्यक्ष, सीताध्यक्ष, सूराध्यक्ष, गणिकाध्यक्ष, नावाध्यक्ष, हस्त्याध्यक्ष, मुद्राध्यक्ष।[53] उपर्युक्त सूची में अधिकांश विभागों तथा पदाधिकारियों का उल्लेख यूनानी लेखकों ने किया है और उन्होंने जो बाते कही है वे कौटिल्य के विवरण से मिलती–जुलती है, जिसमें इनकी विश्वसनीयता सिद्ध हो जाती है।[54] इससे स्पष्ट होता है कि आजकल के आई.ए.एस. की तरह ही मौर्य काल के महामात्र और गुप्त काल के कुमारामात्य रहे हो। इस श्रेणी के कर्मचारी ही उस समय में जिले या प्रादेशिक अधिकारी होते थे और कभी–कभी केन्द्रीय प्रशासन में उच्च पदों तथा मंत्री पद पर भी पहुँच जाते थे।[55] मेगस्थनीज के विवरण से स्पष्ट होता है कि मौर्यकालीन प्रशासन में अधिकारियों के तीन वर्ग थे– नगर अधिकारी, ग्रामीण अधिकारी और सैनिक अधिकारी। शासन अधिकारियों में सबसे ऊपर मंत्री अथवा परामर्शदाता होते थे, उनके नीचे अमात्य और विभिन्न विभागों के अधीक्षक होते थे। केन्द्रीय अधिकारियों के नीचे प्रान्तीय, नगरीय तथा ग्रामीण अधिकारी होते थे।[56]

प्रान्तीय शासन– मौर्य साम्राज्य शासन की सुविधा के लिए कई प्रान्तों में विभाजित था। प्रान्त विभिन्न आहारों या विषयों में विभाजित होते थे और इनके लिए अलग–अलग स्थानीय अधिकारी नियुक्त होते थे।[57] विषय और आहार का उल्लेख अशोक के सारनाथ अभिलेख में भी आया है।[58] बौद्ध साहित्य से भी सूचना मिलती है कि प्राचीन भारत में शासन की सुविधा को ध्यान में रखकर राज्य को अनेक भागों में विभाजित किया गया था। राज्य को केन्द्रीय, प्रान्तीय एवं स्थानीय भागों में विभाजित करके शासन को सुदृढ़ एवं सुनियोजित रूप से चलाने के लिए विभिन्न प्रशासनाधिकारियों की नियुक्ति की व्यवस्था की गयी थी।[59] चन्द्रगुप्त मौर्य के समय प्रान्तों की संख्या कितनी थी इसका वर्णन नहीं मिलता है। शक महाक्षत्रप रुद्रदामन के जनागढ़ अभिलेख

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 8, May 2026 Impact Factor: 8.2

में सौराष्ट्र प्रान्त के राष्ट्रीय गवर्नर वैश्यपुष्यगुप्त का उल्लेख मिलता है।[60] अभिलेख के अनुसार चन्द्रगुप्त के राष्ट्रीय पुष्यगुप्त ने सुदर्शन झील का निर्माण करवाया था। जिससे सिंचाई के लिए नहरों को पानी मिलता था। अशोक के समय में उसके राष्ट्रीय यवन राज तुषास्य ने नहर का पुर्ननिर्माण कर विस्तार एवं सुधार किया था।[61] अशोक के अभिलेखों में मौर्यो के पाँच प्रान्तों का उल्लेख है।

1– गान्धार (उत्तरापथ)– दिव्यावदान के अनुसार, बिन्दुसार के समय में गान्धार की राजधानी तक्षशिला थी एवं वहां विद्रोह हुआ अशोक ने उसे दबा दिया था। प्राचीन काल में तक्षशिला आर्य–विद्या का प्रमुख स्थान था। तक्षशिला व्यापार का केन्द्र होने के साथ सीमान्त प्रदेश होने के कारण राजनैतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण था। इसलिए इसके शासक राजकुमार होते थे। इस कथन की पुष्टि अशोक के अभिलेख से होती है।[62]

2– उज्जयिनी– उज्जयिनी प्रान्त व्यापार का मुख्य केन्द्र था। प्राचीन काल में यह अवन्ति के नाम से विख्यात था। अशोक के समय यह प्रान्त भी राजकुमार द्वारा ही नियंत्रित था।[63]

3– कलिंग– कलिंग चन्द्रगुप्त मौर्य के समय से ही एक स्वतन्त्र अविजित राज्य था। लेकिन सम्राट अशोक के द्वारा इसे मौर्य साम्राज्य का एक प्रान्त बना लिया गया। इसलिए राजनैतिक महत्व अधिक था। अतः इस प्रान्त का शासन भी राजकुल के कुमार के पास ही था।[64]

4– दक्षिणी प्रान्त (सुवर्णगिरि)– यह प्रान्त दक्षिण के चोल, पाण्ड्य राजाओं की सीमाओं को छूता हुआ दक्षिण का दूरस्थ प्रान्त था। स्वतन्त्र राज्यों के पास स्थित होने के कारण वह प्रान्त राजनीतिक दृष्टि से महत्वपूर्ण था। इस प्रदेश की राजधानी सुवर्णगिरी थी।[65]

5– प्राच्य (पाटलिपुत्र)– प्राच्य के शासन संचालन में सम्राट, महामात्र, पाटलिपुत्र तथा कौशाम्बी में रहने वाले उच्च अधिकारियों से सहायता ली जाती थी।[66] अशोक के अभिलेखों में तीन प्रान्तों के शासकों के लिए 'कुमार' नाम आया है, किन्तु सुवर्णगिरि के उपराजा को ब्रह्मगिरि लेख में आर्य पुत्र कहा गया है। इससे स्पष्ट होता है कि आर्यपुत्र कुमारों से पद में बड़ा था। इसलिए वह राजकुमारों में ज्येष्ठ कुमार और युवराज था।[67]

नगर प्रशासन– मौर्य कालीन शासन व्यवस्था में नगरों के प्रशासन की समुचित व्यवस्था थी। कौटिल्य और मेगस्थनीज ने नगरों के प्रशासन में विस्तृत विवरण प्रस्तत किया है। अर्थशास्त्र में नगर के प्रमुख अधिकारी को नागरक कहा गया है। कलिंग अभिलेख के नगर व्यावहारिक महामात्र की तुलना राधाकुमुद मुखर्जी ने कौटिल्य के पौर व्यवहारिक से की है। भण्डारकर ने इस नगर न्यायालय का न्यायाधीश माना है। धौली अभिलेख में अशोक तोषलि के महामात्रों को नगर व्यवहारिक भी बताता है।[68] राजबलि पाण्डेय ने नगर व्यवहारिक महामात्र को अर्थशास्त्र में वर्णित नागरक से समीकृत किया है। धौली प्रथम अभिलेख मे नगलवियो हलिक (नगर–व्यवहारक) के जो कार्य बताये गये है, वे न्याय व दण्ड सम्बंधित है।[69] इस पदाधिकारी की तुलना कौटिल्य के नागरक से करना समीचीन प्रतीत नहीं होता है। नागरक का प्रमुख कर्तव्य नगर का सुप्रबन्ध करना था। नगर को कई मुहल्ले में बाँट दिया जाता था। मुहल्ले के अधिकारी को 'गोप' कहा जाता था।[70] नगर के चतुर्थ भाग के अधिकारी को 'स्थानिक' कहा जाता था। उसे चतर्थ भाग के निवासियों का पूरा विवरण पुस्तिका में दर्ज करना होता था। स्थानिक के अधीन बहुत से 'गोप' कार्य करते थे। एक नगर के लिए चार स्थानिक होते थे जो नागरक के अधीन कार्य करते थे। ये सभी अधिकारी केन्द्र द्वारा नियुक्त किये जाते थे।[71] नगरों में आने–जाने वाले व्यक्तियों की नगर से सम्बंधित अधिकारी रखते थे। नगर के सभी सम्प्रदायों के आवासों पर आने–जाने वाले व्यक्तियों व यात्रियों की सम्प्रदाय के कर्मचारियों को पूरी जानकारी, स्थानिक आदि को

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 8, May 2026 Impact Factor: 8.2

भेजनी होती थी।[72] गृहस्वामियों को भी प्रतिदिन आगन्तुकों के विषय में सूचना गोप को देनी पड़ती थी। यदि गृहपति ने वांछित सूचना नगर अधिकारियों को नहीं भेजी थी तो उस दिन से होने वाली अपराधिक घटनाओं का उसे दोषी माना जाता था।[73] मेगस्थनीज पाटलिपुत्र की 64 फाटकों से युक्त काष्ठ की प्रावीर का उल्लेख करता है। वर्तमान समय में पटना के समीप मौर्यकालीन पाटलिपुत्र की दीवार के लकड़ी के अवशेष प्राप्त हुए हैं।[74] नागरक को प्रतिदिन पानी के स्थान, मार्गो, गुप्त पथों, दुर्गा, गुप्त पथों, दुर्ग की दीवारों और सुरक्षा के अन्य साधनों का निरीक्षण करना होता था। साथ ही साथ रात में होने वाली नगर की सभी दोषपूर्ण घटनाओं की सूचना नागरक द्वारा राजा को देनी होती थी। मेगस्थनीज ने नगर व्यवस्था का जो विवरण दिया है। वह अर्थशास्त्र के विवरण से बहुत साम्य रखता है। मेगस्थनीज ने लिखा है कि नगर की व्यवस्था के लिए 30 सदस्यों की एक महासमिति थी, जो 5–5 सदस्यों की 6 उपसमितियों में विभाजित थी।[75] ये उपसमितियाँ इस प्रकार थी।

1. समिति का कार्य आद्यौगिक कलाओं, उद्योग–धन्धों से सम्बद्ध सभी बातों की देखभाल करना, शिल्पकारों की गतिविधियों का निरीक्षण करना, मजदूरों के कार्य का समय तय करना आदि था। उपसमिति विदेशियों की देखभाल का प्रबन्ध करती थी।
2. उपसमिति का कार्य नगर की जनसंख्या और सम्पत्ति का ब्यौरा रखना था।
3. उपसमिति व्यापार–वाणिज्य की देख–भाल के लिए थी।
4. उपसमिति वस्तु निरीक्षण का कार्य करती थी।
5. उपसमिति कर उपसमिति थी जो बिक्री की वस्तुओं पर दस प्रतिशत के हिसाब से महसूल वसूल करती थी। महसूल न चुकाने पर मृत्यु दण्ड तक दिया जाता था।

कौटिल्य और मेगस्थनीज के विवरण से प्रकट होता है कि नगरों का शासन लोकतंत्रीय आधार पर संचालित होता था। स्थानीय प्रशासन में नगर प्रायः स्वायत्तता प्राप्त थे। केन्द्रीय प्रशासन स्थानीय मामलों पर बहुत कम हस्तक्षेप करता था।[76]

ग्राम प्रशासन– प्रारम्भ से ही शासन केन्द्र बिन्दु और राज्य की सबसे छोटी इकाई ग्राम है। वैदिक युग से ही ग्राम जनपद की महत्वपूर्ण इकाई थी।[77] प्राचीन युग में शासन का आधार ग्राम ही थे। ग्राम का मुखिया 'ग्रामणी' कहा जाता था। ग्रामणी को राजकृत भी कहा गया है, जिससे उसका महत्व प्रकट होता है।[78] जातक कथाओं में ग्रामों के महत्व का उल्लेख मिलता है। ग्राम का प्रमुख व्यक्ति ग्राम भोजक कहलता था जिसे ग्रामणी की संज्ञा भी दी जाती थी। ग्राम भोजक को राजा की तरफ से प्रशासकीय और न्यायिक अधिकार प्राप्त थे। वह कठिन और जटिल मुकदमें को छोड़कर अन्य सभी प्रकार के झगड़ों का समाधान करता था। मुखिया का आज्ञा न मानना दण्डनीय था।[79] लेकिन न्याय का अंतिम अधिकारी राजा होता था इसलिए जटिल मुकद मों का फैसला मुखिया न करके स्वयं राजा करता था। ग्राम शासन व्यवस्था की इकाई माने जाते थे। बहुत से गाँवों को मिलाकर जनपद बनता था।[80] ग्रामीण शासन व्यवस्था के संचालन के लिए 'ग्रामिक' नामक अधिकारी होता था। प्रत्येक ग्राम शासन की दृष्टि से अपनी पृथक व स्वतन्त्र सत्ता रखता था। अलग–अलग ग्राम के अलग–अलग 'ग्रामिक' होते थे।[81] ग्रामिक ग्राम वृद्धों की सहायता से गाँव की व्यवस्था करता था। यदि गाँव के निवासियों में किसी प्रकार का विवाद हो जाय तो उसका निर्णय ग्राम–वृद्धों की सहायता से ग्रामिक ही करता था।[82] अनाथ बालकों और उनकी सम्पत्ति की देख–रेख का कार्य ग्रामिक और ग्राम–वृद्धों की समिति ही करती थी।[83] इससे स्पष्ट होता है कि ग्राम अपने लिए स्वायत्ता रखते थे। ग्रामिक की सहायता के लिए ग्राम संघ थे इन्हे उपवास कहते थे।[84] ये उपवास सम्भवतः ग्राम संधि संघ या ग्राम सभा के सदस्य होते थे जो न केवल ग्राम सम्बंधी मामलो पर विचार–विमर्श करते थे। बल्कि शासन कार्य में ग्रामिका की सहायता भी करते थे–जैसे ग्रामीक को ग्राम

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429 Volume 6, Issue 8, May 2026 Impact Factor: 8.2

में किसी काम से जाना होता था तो उपवास लोग ही क्रमशः अपनी पारी के अनुसार जाते थे।[85] इससे ग्राम के लोग ग्रामीक के की सहायता करते थे। उपर्युक्त विवेचन से स्पष्ट होता है कि मौर्य साम्राज्य जैसे बड़े राज्य का प्रादेशिक विभाजन प्रायः आधुनिक काल के भारत के समान ही था, प्रान्त प्रदेश में विभाजित थे एवं प्रदेश जिलों, नगरों एवं ग्रामों में विभाजित थे। इसका प्रशासन विभिन्न पदाधिकारियों के माध्यम से संचालित होता था।

संदर्भ ग्रन्थ सूची –

1. गरौला, वाचस्पति, (1984) कौटिलीयम् अर्थशास्त्रम, तृतीय संस्करण, चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी, 2/10.
2. कपूर, शैलेन्द्र नाथ, प्राचीन भारतीय राजतंत्र, पृ. 75.
3. शरण, परमात्मा (1979), प्राचीन भारत में राजनीतिक विचार राज्य एवं संस्थाएं, मीनाक्षी प्रकाशन, मेरठ, पृ० 370.
4. शरण, परमात्मा, (1979), पृ० 174.
5. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 1/7.
6. मनुस्मृति, 7/55.
7. कामन्दकीमनी तिसार, सर्ग–17.
8. पांथरी, भगवतीप्रसाद, (1950), पृ० 89.
9. शर्मा, रामशरण, प्राचीन भारतीय राजनीतिक विचार एवं संस्थाएं, पृ.133.
10. अग्निहोत्री, प्रभुदयाल, (2007), पतंजलिकालिन भारत, ईस्टर्न ब्रक लिकंर्स, दिल्ली, पृ. 380.
11. मनुस्मृति, 7/148.
12. चौधरी, राधाकृष्ण, (1989), पृ० 134.
13. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 4/1.
14. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 1/7.
15. शांतिपर्व, 83/47.
16. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 1/12.
17. शरण, परमात्मा, (1979), पृ 252.
18. कौटिल्य अर्थशास्त्र, 1/9.
19. कपूर, शैलेन्द्र नाथ, पृ. 76.
20. विद्यालंकार, सत्यकेतु (1978), पृ. 169.
21. कौटिल्य अर्थशास्त्र, 1/10.
22. जायसवाल, के० पी०, (2012), पृ. 123.
23. अग्रवाल, वासुदेव शरण, (2014), पाणिनी कालीन भारत, चौखंभा भवन, पृ. 391.
24. पुरी, वी० एल०, (1968), हिस्ट्री ऑफ इण्डियन एडमिनिस्ट्रेशन, भारतीय विद्यागवन, प्रथम संस्करण, बॉम्बे पृ. 77.
25. कौटिल्य अर्थशास्त्र, 33/2.
26. पांथरी, भगवती प्रसाद, (1950), पृ० 117.

Copyright to IJARSCT
www.ijarsct.co.in
DOI: 10.48175/IJARSCT-35517

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 8, May 2026
Impact Factor: 8.2

27. कौटिल्य अर्थशास्त्र, 20/1.
28. जायसवाल के० पी०, हिन्दु राजतंत्र, पृ० 153.
29. विधांलकार, सत्यकेतु, (1978), पृ 176
30. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 6/2.
31. कौटिल्य, अर्थशास्त्र 5/2.
32. कौटिल्य, अर्थशास्त्र 9/4.
33. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 2/10.
34. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ. 85.
35. पांथरी, भगवती प्रसाद, (2006), पृ. 118.
36. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 12/2.
37. विद्यालंकार, सत्यकेतु, (1978), पृ. 179.
38. पांथरी, भगवती प्रसाद, (2006), पृ. 73.
39. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ. 4.
40. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ.4.
41. जायसवाल, काशी प्रसाद, (1924), हिन्दू राज्यतंत्र, (दो खण्ड), अनु० रामचंद्र वर्मा, नागरी प्रचारिणी सभा, काशी, पृ.129.
42. जायसवाल, के० पी०, (1924), पृ.129.
43. कौटिल्य अर्थशास्त्र, पृ.121.
44. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ.105.
45. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ.27.
46. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ.150.
47. गोयल, श्रीराम, (2007), पृ.494.
48. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ.36.
49. थापर, रोमिला, (1977), अशोक और मौर्य साम्राज्य का पतन, ग्रंथ शिल्पी, इंडिया प्राइवेट लिमिटेड, पृ124.
50. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 6/2.
51. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ.47.
52. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ.89.
53. शरण, परमात्मा, 1978, पृ०393–94.
54. मुखर्जी राधाकुमुद, (2015), चंद्रगुप्त मौर्य और उसका काल, जैनेरिक प्रकाशन, पृ०124.
55. अल्तेकर, ए० एस०, (1959), पृ.177.
56. शरण, परमात्मा, (1978), पृ०397.
57. पांथरी, भगवती प्रसाद, (1950) पृ०111.
58. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), (सारनाथ स्तम्भ लेख) पृ.185.

IJARSCT
International Journal of Advanced Research in Science, Communication and Technology
International Open-Access, Double-Blind, Peer-Reviewed, Refereed, Multidisciplinary Online Journal
ISSN: 2581-9429
Volume 6, Issue 8, May 2026
Impact Factor: 8.2

59. अल्तेकर, ए० एस०, (1959), पृ.157.
60. भण्डारकर, डी. आर०, (1960), अशोक, एस० चन्द एण्ड कम्पनी, दिल्ली, पृ. 45–46.
61. शास्त्री, नीलकंठ, (1969), नंद मौर्य युगीन, भारत, अनु० मंगलनाथ सिंह, प्रथम संस्करण, मोतीलाल बनारसी दास, दिल्ली, पृ.204.
62. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ.9.
63. भण्डारकर, डी० आर०, (1960), धौली प्रथम अभिलेख, पृ०45.
64. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ.93.
65. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ.119.
66. चौधरी, हेमचनद्र राय, (1971), प्राचीन भारत का राजनैतिक इतिहास, किताब महल, इलाहाबाद, पृ.212.
67. अग्रवाल, वासुदेवशरण, (2014), पाणिसी कालीन भारत, पृ.392.
68. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ.90.
69. पांडे, राजबलि, (सवंत 2022), पृ.20–21.
70. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 36/2.
71. विद्यालंकार, सत्यकेतु, (1985), मौर्य साम्राज्य का इतिहास, इंडियन प्रेस, इलाहाबाद, पृ.221.
72. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 36/2.
73. कौटिल्य, अर्थशास्त्र, 36/2.
74. बासम, ए० एल०, (2020), अद्भुत भारत, शिवलाल अग्रवाल एण्ड कम्पनी, पृ.112.
75. ट्रैक्मेयर, चार्ल्स, (1922), किंगशिप एण्ड कम्यूनिटी इन अर्ली इण्डिया, स्टैनफॉर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस कैलिफोर्निया, ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस, बाम्बे, पृ.168.
76. ड्रैक्मेयर, चार्ल्स, (1922), पृ.169.
77. अल्तेकर, ए० एस०, (1959). प्राचीन भारतीय शासन पद्धति, काशी विश्वविद्यालय प्रकाशन, इलाहाबाद, पृ.168.
78. चौधरी, राधाकृष्ण, (1989), पृ.290.
79. भदंत आनंद कौसल्यायन, (1985), जातक, द्वितीय हिन्दी साहित्य–सम्मैलन, प्रयाग, पृ.30.
80. विद्यालंकार, सत्यकेतु, (1985), पृ.229.
81. चौधरी, राधाकृष्ण, (1989), पृ.290.
82. कौटिल्य अर्थशास्त्र, 6/3.
83. कौटिल्य अर्थशास्त्र, 1/2.
84. कौटिल्य अर्थशास्त्र, 7/2.
85. कौटिल्य अर्थशास्त्र, 10/3